Multidisciplinary International Magazine
(Peer-Reviewed)
ISSN: 2454-2725, Impact Factor: GIF 1.888
www.jankriti.com
Volume 6, Issue 68, December 2020

JANKRITI जनकृति

बहु-विषयक अंतरराष्ट्रीय पत्रिका
(विशेषज्ञ समीक्षित)
ISSN: 2454-2725, Impact Factor: GIF 1.888
www.jankriti.com
वर्ष 6, अंक 68, दिसंबर 2020

'दायरा और 'कांच' कहानी में सामाजिक और आर्थिक चेतना का द्वंद'

ममता
(शोधार्थी)
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
फोन न. 8376922025,
मेल आई डी-
mamtar35@gmail.com

सारांश-

इस शोध पत्र में मैंने विपिन बिहारी की दो कहानियों कांच और दायरा का आलोचनात्मक विश्लेषण करने का प्रयास किया है। कहानियों में सामाजिक और आर्थिक चेतना का द्वंद जानने से पहले इन कहानियों की पृष्ठभूमि जानना अति आवश्यक हो जाता है।

बीज शब्द- *कहानी, सामाजिक, आर्थिक, चेतना*

भूमिका-

हिंदी साहित्य के चर्चित वरिष्ठ कथाकार विपिन बिहारी का दलित साहित्य में विशिष्ट स्थान है विपिन बिहारी की कहानियों एक नए विमर्श को जन्म देती हैं साथ ही इनकी रचनाओं का स्वाद एक दम निराला है जो दलित विमर्श को नई ऊँचाइयाँ प्रदान करती है। समाज की वर्चस्वशाली ताकतों से लड़ने का ज्ञान व सामर्थ्य लिए इनकी रचनाएं लिए हुए है। इनकी कहानियाँ अपने अस्तित्व व अपनी पहचान को पुख्ता करती हैं, साथ में इनका साहित्य अम्बेडकरवाद को भी पोषित करता है। अंबेडकरवाद को स्थापित करने व जन-जन तक आम्बेडकरवाद की वैचारिकी को पहुँचाने में लेखक का विशेष योगदान है। इनकी कहानियां न केवल पाठक पर अपना प्रभाव छोड़ती है बल्कि वैचारिक द्वंद को भी छेड़ती हैं जिससे सहमत व असहमत दोनो हुआ जा सकता है। सम्यक प्रकाशन के संपादक व बुद्ध और आम्बेडकर की वैचारिकी को जन-जन तक पहुँचाने वाले सामाजिक कार्यकर्त्ता स्वर्गीय शांति स्वरूप बौद्ध, कहानीकार विपिन बिहारी के दलित साहित्य में दिए गए योगदान पर लिखते हैं- "विलक्षण प्रतिभा के धनी विपिन बिहारी जी 'हिन्दी दलित कथा साहित्य' के पर्याय के रूप में स्थापित हो चुके हैं। शासक जातियों द्वारा हाशिये पर धकेला गया समाज और उसकी पीड़ाओं ने विपिन बिहारी जी की रचनाओं में यथोचित स्थान पाया है।"

'दायरा' कहानी दलित लेखक विपिन बिहारी द्वारा रचित है। यह कहानी दलित देवधारी के जीवन यथार्थ को भूलाकर उस ब्राह्मणवादी मानसिकता से पोषित व्यवस्था में उलझ जाने व समा जाने की प्रक्रिया है जो उसमें आत्मग्लानि का बोध लेकर आती है। देवधारी आज संपन्न व समृद्ध धनाड्य परिवारों में शुमार है। बड़े-बड़े पैसे वाले लोगों के बीच उसका उठना बैठना है वह अपने बेटे के जन्मदिन पर वह सब करता है जो उसे उच्च जाति के

रसूकदार लोग करते हैं। वह अपनी प्रांरभिक पृष्ठभूमि (जन्मआधारित) से मिली चेतना को जीवन में सफलता प्राप्त करने के बाद भूल जाता है। देवधारी भी वही सब धार्मिक आडंबर करने लगता है जिसकी कभी वह स्वयं आलोचना किया करता था। देवधारी अपनी माँ की सीख को याद करता है - "धर्म ...ईश्वर के प्रति वह तनिक भी उत्सुक नहीं थी। सारे पर्व-त्योहार सामान्य तरीके से बीत जाते थे। उसने कभी कोई मन्नत नहीं मांगी देवधारी के नाम पर।" लेकिन आज वह अपनी पत्नी ललिता के दिखाए रास्ते पर चलने लगा है और धार्मिक अनुष्ठान व कर्मकांड के जाल में फंस जाता है। ललिता सवर्ण जाति से होते हुए भी पहले से विवाहित व दलित देवधारी से विवाह करना चाहती है। ललिता के अनुसार वह जात-पात नहीं मानती वह कहती है कि- "औरत की कोई जात नहीं होती। यदि मैं सवर्ण हूं भी ,तो आपके साथ होने पर आपकी जात की हो गई।" पहली पत्नी के बावजूद देवधारी ललिता से विवाह कर लेता है जिसके कारण उसकी पहली पत्नी और उसके माता-पिता उसका त्याग कर देते हैं। अब ललिता ही उसकी जिंदगी है। ललिता के संस्कारों व समझ का असर देवधारी में दिखता लेखक दलित व संपूर्ण समाज के संस्कारों में मूल अंतर को बताता हैं। जहां दलित परिवार में जन्में देवधारी का परिवार धर्ममुक्त, ईश्वरमुक्त जीवन जीता था। लेखक कथा में उस घटना का जिक्र करता है जहाँ से देवधारी के मन में भगवान के अस्तित्व को लेकर सवाल खड़े हुए। मंदिर में भगवान के दर्शन करने पर गाँव के सवर्ण दबंगों ने देवधारी की जगिया चाची को निर्वस्त्र कर गाँव में घुमाया था उसका कारण था कि जगियों चाची ने मंदिर में प्रवेश कर ईश्वर की मूर्ति को छुआ था। उस समय देवधारी के मन में भगवान के अस्तित्व को लेकर प्रश्न उठते लेकिन अब वह वही सब कर रहा है जिस पर बचपन में उसके प्रश्न खड़े किये थे और ईश्वर की अस्वीकार किया था। लेखिका देवधारी में हुए बदलाव पर लिखता है- "देवधारी को कभी अम्बेडकरवादी, परंपरा विरोधी थे, जो देवी-देवताओं ,यहां तक कि ईश्वर के अस्तित्व तक तो नकारते थे, अब सबको स्वीकारने लगे थे वे। वे ज्योतिष को नहीं मानते थे... अब उनकी अंगुलियों में नीलम...पोखराज के पत्थर शोभने लगे थे। भाग्य और ईश्वर पर उनकी आस्था गहरी होती गई थी।"

देवधारी के साथ-साथ उसकी अगली पीढ़ी पुत्र दीपक भी अब देवधारी की केंचुल को छोड़ चुका है वह आरक्षण को त्यागने की बात कहता है परन्तु 'दायरा' कहानी यह दिखाने का प्रयास लेखक करता है कि देवधारी आरक्षण को स्वीकारता है परन्तु उसकी अगली पीढ़ी आरक्षण से प्राप्त सुविधाओं के प्रति आभार नहीं मानती और अपने को आरक्षण का लाभ न लेने की बात कहती है। देवधारी का पुत्र दीपक आरक्षण न लेने की बात करता है परन्तु वह भी अपने पिता के मिलने वाले आरक्षण का लाभ अप्रत्यक्ष रूप से ले रहा है।

दलित साहित्य जाति के विनाश की बात करता है। डॉ. अंबेडकर भी स्वयं रोटी-बेटी के संबंध को जाति के नाश के लिए जरूर समझते थे ताकि आने वाले पीढ़ी जातिगत भेदभाव न हो। लेकिन विपिन बिहारी की कहानी 'कांच' एक नए विमर्श को जन्म देती है। दलितों का इतिहास और वर्तमान उनके साथ हो रहे शोषण का साक्षी है। लेकिन यह कहाँ तक जायज है कि हम अपनी ही जाति में रहकर घेराबंदी कर ले और फिर वही असमानता व तटस्थता अपना लें जो आज तक सवर्ण समाज दलितों के साथ करता आ रहा है।'कांच' कहानी में प्रमुख पुरुष पात्रों में बसंत बाबू और उनका पुत्र सुयश है। सुयश जो दूसरे शहर में नौकरी करता है। कई दिनों बाद वह अपने माता-पिता

से मिलने घर आता है। सुयश का परिवार एक दलित परिवार है बावजूद इसके सुयश एक सवर्ण लड़की से प्रेम करता है और विवाह करने की इच्छा रखता है। बसंत बाबू को सुयश द्वारा एक सवर्ण लड़की से विवाह करना बिल्कुल ही गवारा नहीं है वह चाहते हैं कि सुयश किसी दलित परिवार की लड़की से ही विवाह करें ताकि उनके संपन्न होने का कुछ लाभ उस गरीब दलित लड़की को भी मिले। जबकि सुयश अपने पिता की इस राय के विपरीत अपने को जाति से मुक्त होकर अपना जीवन जीने की बात कहता है। कहानी जैसे-जैसे आगे बढ़ती है वैसे –वैसे कथा में कई बदलाव आने लगते हैं जिनमें बसंत बाबू का व्यक्तित्व प्रमुख है। मुझे बंसत बाबू तब तक चेतनशील लगे जब तक वह अपनी जाति न छुपाने व उस पर गर्व करने की बात का समर्थन करते हैं तथा साथ ही डॉ. आंबेडकर की बातों का अनुसरण भी करते हैं लेकिन बेटे सुयश द्वारा जाति को छुपाकर रखने की बात पर बंसत बाबू कहते हैं -"मैं भी नौकरी ही कर रहा हूँ, लेकिन मैंने अपनी सोच नहीं बदली, जात नहीं बदली और गर्व से कहता हूं मैं कि 'अमुक' जात से हूँ। छूत मानने वाले अब जो समझें, कोई छुपाव नहीं। जात से कब तक भागेंगे? जिस जात के बल पर तुमने ऊँचाई तय की है, उसे भी एक ऊँचाई दो, न कि भाग जाओ अपना काम निकालकर।" बसंत बाबू जाति के यथार्थ को अपने अस्तित्व से जोड़कर देखते है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में जाति एक सत्य है जिसके आधार पर तमाम क्षेत्रों में दलितों को योग्य नहीं समझा गया या उस रेस से ही अलग कर दिया जिस पर उनका भी उतना ही अधिकार था जितना अन्य किसी सवर्ण जाति का। वह दलित जाति का होने का कारण किसी भी प्रकार की हीन भावना से मुक्त हैं। वह दलित जाति के अनुभवों से अपने वर्तमान व भविष्य का मूल्यांकन कर रहें हैं। किसी पद को प्राप्त कर दलित अपने ही समाज से अपना पल्लू खींच लेते हैं परन्तु बसंत बाबू अपने सिद्धांतों के प्रति वचनबद्ध नजर आते हैं। जो दलित आंदोलन व दलित वैचारिकी को पोषित करने में सहायक हैं।

इस कहानी के इतर विपिन बिहारी की दायरा कहानी में भी इसी सवाल को एक अलग कलेवर के साथ रखा गया है। दायरा कहानी में जहाँ सवर्ण स्त्री से विवाह के बाद दलित देवधारी के अपनी जड़ो से अलग होने की बात को कथा का केन्द्रीय विषय बनाते हैं साथ ही कैसे अंबेडकरवादी देवधारी ललिता से विवाह कर घोर परंपरावादी, धार्मिक होकर अंधविश्वासों में जकड़ जाता है। दोनो ही कहानियाँ सवर्ण समाज के प्रति घोर अविश्वास को दिखाती है परन्तु क्या यह मान लेना कि दलित का सवर्ण लड़की से विवाह के पश्चात ही वह अपनी जाति व चेतनशीलता का त्याग कर परंपरावादी बन जाता है? मुझे लगता है कि यह सही नहीं है क्योंकि एक स्त्री पुरुष के मस्तिष्क पर नियंत्रण नहीं करती एक स्त्री स्वयं दलित (दमित व शोषित) होती है तो वह किस प्रकार एक पुरुष को उसकी जड़ो से अलग करने के लिए मजबूर कर सकती है इसमें उस पुरुष के भीतर के आत्मबल का कमज़ोर होना है। सारा दोष अप्रत्यक्ष रूप से एक स्त्री पर लगा देना कहाँ तक सही है?

सुयश अपने पिता बसंत बाबू से जाति को त्यागने की बात कहता है वह उसे अपने लिए रूकावट मानता है- "यदि जात मुझे कदम-कदम पर बाधा डाले, उसके नाम पर उपेक्षा मिले, प्रताड़ना सहनी पड़े, तो क्या उसे छोड़ देने में हर्ज होगा? यानी कि मैं आगे निकलना चाहता हूँ। जात के खोल से मुक्त होना चाहता हूँ, सम्मानीय बनना चाहता हूँ। मैं वही करूँगा जो मेरे मन में है, जिसे मैं उचित समझता हूं।" सरकार व सामाजिक कार्यकर्त्ताओं द्वारा किये

जा रहे जाति उन्मूलन के कार्यक्रमों से बसंत बाबू संतुष्ट नहीं हैं वह यह नहीं मानते कि दलितों के लिए शोषणकारी समाज की मानसिकता में कोई बदलाव आया है वह कहते हैं। दलित समाज आज भी उत्पीड़न का सामना कर रहा है। समाज में जाति के नाम पर उसे कदम-कदम पर उपेक्षा झेलनी पड़ रही है। इस उदासीनता ने उन्हें अभी भी सवर्ण समाज के साथ पूर्वाग्रहों से बसंत बाबू का मन-मस्तिष्क भरा हुआ है जिसके तहत वह प्रत्येक सवर्ण को दलित विरोधी मान बैठे हैं। सवर्ण लड़की व उसके परिवार वालों का आसानी से विवाह के लिए मान जाने से उनके मन में संशय और द्वंद होता है। वह सुयश से कहते हैं कि- "रिजर्वेशन से तुम लाभान्वित हुए, कहीं ऐसा तो नहीं कि तुम्हें जोड़कर अपना उल्लू सीधा करना चाह रहे हों वे लोग? सोचो गौर करो।" कहानी कई सवालों को उठाती है जिसकी चर्चा हम आगे करेंगे। विपिन बिहारी की यह कहानी कांच और इसके प्रमुख पात्र बसंत बाबू क्या दलितों में एक नई प्रकार की चेतना का संचार करना चाहते हैं और यह डॉ. अम्बेडकर की वैचारिकी के कितना निकट व सही है? यह जानने के लिए डॉ. अम्बेडकर की किताब जाति का विनाश को देखना अति आवश्यक जान पड़ता है। ताकि दलित समाज अपनी मुक्ति के मार्ग से भटक न जाए।

- विपिन बिहारी के कहानी संग्रह 'दो ध्रुवीय' की कहानियों पर टिप्पणी करते हुए दलित आलोचक कंवल भारती का यह कहना कि दलितों में राजनीतिक चेतना से आए गौरव के कारण ब्राह्मणवाद पैदा हो रहा है जिससे आने वाले समय में दलित जातियों में ही अर्थ की सत्ता को लेकर संघर्ष हो सकता है। यह संभावनाएं सूरजपाल चौहान की नया ब्राह्मण, ओमप्रकाश वाल्मीकि की शवयात्रा, सत्यप्रकाश की दलित ब्राह्मण तथा विपिन बिहारी की दायरा कहानी में देखने को मिलती हैं लेकिन इस कारण से राजनीतिक रूप से दलितों के सशक्तिकरण को रोका नहीं जा सकता। जिसके लिए दलित साहित्य व दलित समाज को डॉ. आम्बेडकर की वैचारिकी को अपने जीवन में पूर्णता अपनाने की जरूरत है। दलितों पर हुआ शोषण, एक दलित के साथ नहीं बल्कि संपूर्ण दलित समाज के शोषण को दिखाता है इसलिए यह एक व्यक्ति की लड़ाई न होकर संपूर्ण समाज की लड़ाई है ।

दायरा कहानी में अभिव्यक्त सामाजिक चेतना के अंतर्गत भारतीय समाज में दलित की वैचारिकी, उनका रहन-सहन, उनकी मान्यताएं और उनके साथ होने वाला शोषण इन सब को लेखक ने दिखाने का प्रयास किया है। कई मान्यताओं में दलित संस्कृति आदिवासी संस्कृति के नजदीक लगती है जहाँ पर ईश्वर का वह रूप नहीं है जो हिंदू संस्कृति में देखने को मिलता है। आदिवासी समाज में देवी-देवता के रूप में प्रकृति की आराधना की जाती है। दायरा कहानी में लेखक ने दलित समाज द्वारा ईश्वर को सरे से नकारा है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में जाति के आधार पर बँटे समाज में दलित समाज के साथ ईश्वर के नाम पर जघन्य अपराध किए जाते हैं स्त्रियों के साथ अपमानित कर्म करने के बाद उसे धर्म के अनुसार सही ठहराया जाता है। कथा में भी देवधारी की चाची को गाँव में निर्वस्त्र घुमाया जाता है क्योंकि उसने मंदिर में प्रवेश करने का साहस किया था। ऐसी ही घटना का जिक्र मोहनदास नैमिशराय की अपनी कहानी 'अपना गाँव' में किया है जब कबूतरी नामक दलित विवाहिता को गाँव के जमीदारों द्वारा गाँव भर में निर्वस्त्र घुमाया जाता है। दलितों के साथ हो रहे इन अपराधों की सजा न तो उन्हें समाज , कानून और न ही ईश्वर दे रहा है। फिर किस कारण से ईश्वर पर विश्वास करने पर दलित समाज तैयार हो। आज 21 वीं सदी के भारत में ऐसी कई घटनाएं देखने को मिल जाएंगी जिसमें दलितों को मंदिर प्रवेश पर दंडित किया जाता है। 8

अक्टूबर 2015 को अमर उजाला में छपी खबर के अनुसार उतराखंड के दलितों को जौनसार स्थित कुकुर्शी मंदिर में प्रवेश नहीं करने दिया गया। इस मंदिर में आज भी दलितों के प्रवेश पर रोक है।

इन घटनाओं से आक्रोशित होकर आज का दलित समाज ईश्वर की सत्ता को नकार रहा है यह सामाजिक चेतना का स्वर न केवल समाज अपितु साहित्य में भी भली-भाँति देखने को मिल रहा है। देवधारी के पिता पूरे परिवार के सामने ईश्वर के वजूद पर सीधे-सीधे प्रश्न खड़े करते हुए कहते हैं- "जो दूसरे के रहमो-करम पर मंदिर में बैठा है, उससे कौन-सी आस लगानी? आज के बाद किसी ने मंदिर की तरफ झांका, तो वे लोग क्या कुछ करेंगे, हम ही पीट के मुआ डालेंगे। भगवान ही होता, तो वे दबंग नहीं होते और हम दुर्बल नहीं होते। वे अछूत होते। यहाँ आदमी-आदमी में भेद है। भगवान है तो ये भेद दूर काहे नहीं कर देता? यदि भगवान का इतना शौक है तो अपना भगवान खुद गढ़ लो उनकी तरह ही।" लेखक ने ईश्वर की सत्ता के नकार के साथ-साथ दलितों को स्वयं का ईश्वर गढ़ने की सलाह दी। आज दलित समाज के लोग महात्मा बुद्ध और डॉ अम्बेडकर के अनुयायी बन उनके द्वारा दिखाए गए मार्ग पर चल रहे हैं जहाँ पर धर्म, जाति ,लिंग व रंग के आधार पर विभेद नहीं किया जाता इन महापुरुषों के दर्शन को कोई भी जन अपना सकता है। जिसमें समानता, भाईचारे व स्वतंत्रता के तत्व मौजूद हैं।

दायरा कहानी धार्मिक कर्मकांडों में उलझे सवर्ण समाज की पोल खोलता है जहाँ पर तमाम तरीके के अनुष्ठान कर ईश्वर को प्रसन्न किया जाता है। तमाम तरीके के पत्थर व नगीने अँगुलियों में धारण करने से लाभ प्राप्ति का भ्रम पाला जाता है, यह सभी बातें समाज की प्रगति में बाधक हैं। आज दलित समाज में सामाजिक चेतना के स्वर देखने को मिल रहें हैं। दलित समाज में पला-बढ़ा देवधारी की परवरिश ऐसे परिवेश में हुई जहाँ पर उसका परिवार परंपरा विरोधी, ज्योतिष विद्या को अस्वीकार और अम्बेडकरवाद को अपने जीवन में अपनाता है। लेकिन देवधारी द्वारा जब से सवर्ण जाति की ललिता से दूसरा विवाह किया जाता है उसके जीवन जीने के तौर-तरीके में बिल्कुल बदलाव आ जाता हैं परन्तु देवधारी की चेतना में अभी भी अम्बेडकरवाद देखने को मिलता है। लेखक कथा में बार-बार यह प्रयास करता नज़र आता हैं कि देवधारी के मन-मस्तिष्क में आज भी ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकारने पर असहमति बनती हुई नज़र आती है वह लगातार प्रश्न उठता है। देवधारी हवन करते समय विचार करता है कि - "वे किस भगवान के नाम पर हवन कर रहें हैं? उन्होंने अपना भगवान पैदा किया है या किसी से उधार लिया है? ललिता को देखा...वह हाथ जोड़, आंखें बंद किए हुए बैठी थी, जैसे भगवान उसकी आंखों में कैद हो गया था और उसे डर हो, उसने कहीं आंखें खोलीं कि भगवान आंखो की कैद से छिटक भागेगा। और दीपक...वह, वह तो जैसे भगवान को साक्षात देख रहा था।"

दलित कहानियों में कांच अपनी तरह की कहानी है जो दलित समाज व वैचारिकी के सामने एक नया प्रश्न खड़ा करती है। जाति को लेकर तमाम आंदोलनों व सामाजिक सुधारों से 'जाति के विनाश' की बात की गई परन्तु अब एक अन्य विमर्श खड़ा हो रहा है जिसमें दलितों ने यह मान लिया है कि 'जाति है कि जाती नहीं'। वह इस बात को मान गए हैं कि तमाम सुधारों, आंदोलनों, शिक्षा के प्रचार-प्रसार के बाद भी जाति के प्रश्न से मरने के बाद भी पीछा नहीं छूटता तो क्यों न अपनी जाति पर ही गर्व किया जाए। आखिर क्यों जाति से मुक्त हुआ जाए? आखिरकार जातीय अस्मिता ने ही उनके अंदर शोषण से लड़ने की चेतना जगाई है और चेतनशील होने के बाद क्यों जाति

छुपाकर या किसी के सामने उजागर होने के भय को हर वक्त अपने दिल में रखा जाए। इसलिए जाति पर ही गर्व करें और बिना किसी शर्म के अपनी जाति को स्वीकार कर समाज में अपना अधिकार प्राप्त करें। 'कांच' कहानी का प्रमुख पात्र बसंत बाबू इसी समझ के साथ अपने पुत्र सुयश से कहते हैं- "मैं भी नौकरी ही कर रहा हूँ, लेकिन मैंने अपनी सोच नहीं बदली, जात नहीं बदली और गर्व से कहता हूँ मैं कि 'अमुक' जात से हूँ। जात से कब तक भागेगे।" बसंत बाबू भारतीय सामाजिक व्यवस्था को जानते हैं जिसमें तमाम जातियों में समाज बंटा हुआ है। इस समाज में वह अपने को शूद्र मानते हैं वह अपनी जाति पर अभिमान करते हैं वह जाति के साथ ही जीवन में प्राप्त सफलताओं को स्वीकार कर मानते हैं कि 'जाति' से मुख फैर लेने से जाति नहीं छुपती। कांच कहानी एक नए बुद्धिजीवी वर्ग के भीतर की चिंताओं व दुश्चितांओं का उद्घाटन करता है। क्या वाकई कथा में बसंत बाबू का डर जायज है जो अपने बेटे के जाति त्यागने व किसी सवर्ण स्त्री के साथ विवाह करने से जन्मा है। बंसत बाबू उन चेतनशील दलित समाज के व्यक्ति में शामिल हैं जो अपने व अपनी जाति के साथ हुआ शोषणकारी व्यवहार व परंपराओं को जानते हैं बल्कि उनका अनुभव भी वह करते आए हैं। इन अनुभवों से प्राप्त चेतना को वह अपने पुत्र सुयश को देना चाहते हैं। अपने पिता के विचार जानकर सुयश काफी हैरान होता है वह अपने पिता को ही जातिवादी ठहराते हुए कहता है- "आप तो घोर जातिवादी है, बेकार में हम लोग उन लोगों को बदनाम करते हैं कि वे जात-पात करते हैं, भेदभाव बरतते हैं।" अपने पुत्र सुयश द्वारा बार-बार जाति की स्वीकार्यता को जातिवादी ठहरा देने पर वह क्रोधित होते हैं। बसंत बाबू सुयश को समझाते हुए स्पष्ट करने का प्रयास करते हैं कि जातिवाद जाति के आधार पर किए जाने वाले शोषणकारी मानसिकता को कहा जाना चाहिए। सुयश भी यही मानने लगता है कि उसके पिता जाति के आधार पर ही उसका विवाह सवर्ण जाति की लड़की से नहीं होने देना चाहते। अभी तक की दलित कहानियों में सवर्ण स्त्री से विवाह में जाति बाधक बनती थी। वहाँ सवर्ण स्त्री के परिवार एक दलित लड़के से अपनी पुत्री के विवाह को न तो परंपरा के हिसाब से सही ठहराते थे और न ही सामाजिक प्रतिष्ठा के मापदंड़ो पर उचित। परन्तु यह कथा इसके बिल्कुल ही उल्ट बात करती है जो चर्चा के लिए एक नई बहस छेड़ देती है। जब बसंत बाबू कहते है- "तुम उस लड़की से शादी करोगे तो यह बहुत बड़ी गलती होगी तुमसे । मैं नहीं चाहता कि कोई सवर्ण लड़की मेरे घर की बहू बने।" दलित समाज में इस प्रकार की हट व कट्टरता से दलितों को संभलना होगा क्योंकि समानता का वह मूल तत्त्व जो आम्बेडकरवाद सिखाता है वह कहीं गुम न हो जाएगा। सामाजिक रूप से शोषित तबके से संबंध रखने वाले बसंत बाबू का यह सोचना तब कहीं से गलत नहीं लगता जब दलित समाज के शोषणकारी इतिहास को देखा जाए, यह कहा जा सकता है कि यह सामाजिक चेतना बसंत बाबू की जीवन में प्राप्त अनुभवों और भारतीय सामाजिक व्यवस्था के ताने-बाने को बारीखी से देखने से प्राप्त हुई हैं। अरुंधति राय अपनी किताब 'एक था डॉक्टर एक था संत' में भारतीय वर्णव्यवस्था को बताते हुई लिखती हैं- "हिंदू समाज की लगभग चार हज़ार सजातीय विवाही जातियाँ और उपजातियाँ हैं, जिनमें प्रत्येक का एक विशिष्ट वंशानुगत व्यवसाय है, और जिन्हें चार वर्णों में बाँटा गया है- ब्राह्मण(पुजारी), क्षत्रिय(सैनिक), वैश्य(व्यापारी) और शूद्र(सेवक)। इन वर्णों के बाहर अवर्ण जातियाँ हैं, अति शूद्र, अवमानवीय (मनुष्य से कमतर) जिनकी अपनी अलग श्रेणी-अनुक्रम हैं- अछूत, दर्शन-अयोग्य, समीप जाने के अयोग्य-जिनकी उपस्थिति, जिनका छूना, जिनकी परछाई भी विशेषाधिकारप्राप्त जाति के व्यक्ति को प्रदूषित कर सकती है। कुछ समुदायों में सजातीय प्रयनन से बचने

के लिए, प्रत्येक सजातीय विवाही जाति को ऐसे गोत्रों में बाँटा गया है, जिनके अंदर आपस में विवाह निषेध है।" बसंत बाबू द्वारा अनुभवों व तथ्यों पर आधारित सत्य को स्वीकारने के लिए सुयश को कहते हैं कि वह सवर्ण की बजाय दलित लड़की से विवाह करे। परन्तु वैवाहिक निर्णय का अधिकार सुयश को पहले है वह अपनी समझ से लड़की का चुनाव करे ना कि समाज सुधार के लिए दलित लड़की के साथ विवाह की हामी भर दे। प्रत्येक सत्य अपनी स्थिति, काल व संदर्भ बदलने से बदल जाता है। उसी प्रकार कांच कथा में दलित की जगह सवर्ण स्त्री का चुनाव करना सुयश की प्राथमिकता है।

कांच और दायरा इन कहानियों में आर्थिक चेतना के तत्व भी देखने को मिलते हैं। दायरा कहानी में देवधारी ने शिक्षा प्राप्त कर आरक्षण के जरिये पद प्राप्त किया। वह लगातार सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ रहा था इसी दौरान उसे ललिता मिली। देवधारी पहले से ही शादीशुदा और एक बच्ची का पिता था इसके बावजूद ललिता देवधारी से विवाह करने के लिए तैयार थी। सबसे अचंभित करने वाली बात ललिता के माता-पिता की तरफ से होती है जो देवधारी से अपनी पुत्री के विवाह के लिए रोज़ी हो जाते है। देवधारी भी ललिता के प्रति आकर्षित है परन्तु वह विवाह का निर्णय नहीं ले पा रहा वह संशय में भी है कि आखिर क्यों ललिता के पिता उसे ही अपनी पुत्री के योग्य क्यों समझते हैं जिसके उत्तर में ललिता के पिता लोकनाथ शर्मा कहते हैं- "सच बात तो ये है देवधारी बाबू कि आप में संभावनाएं हैं। ऐसे असीम संभावनाशील से जुड़ने में मुझे कोई गुरेज नहीं। हमलोग आपको किसी भी हाल में जोड़कर रहेंगे।" एक पिता अपनी पुत्री के लिए ऐसे वर का चुनाव करता है जिसकी एक संतान व पत्नी पहले से है, अचंभित भी करता है और असंजस्य में भी डालता है। लेखक यहाँ पर संकेत करते हैं कि देवधारी में उज्ज्वल होती संभावनाएं जिसे लोकनाथ शर्मा देख रहे थे वह किस लाभ से प्रेरित हैं? आज सवर्णो द्वारा दलितों से विवाह के पीछे यह शंका जताई जाती है कि आरक्षण का लाभ भावी पीढ़ी को मिल सके इसके लिए कई सवर्ण अपनी पुत्रियों का विवाह दलित लड़को से करने के लिए तैयार हैं। ऐसी ही संभावना 'कांच' कहानी में बसंत बाबू अपने पुत्र द्वारा सवर्ण लड़की से विवाह पर शंका जताते हुए कहते है- "हाँ, रिजर्वेशन से तुम लाभान्वित हुए, कहीं ऐसा तो नहीं कि तुम्हें जोड़कर अपना उल्लू सीधा करना चाह रहे हों वे लोग? सोचो, गौर करो।" कांच और दायरा दोनों ही कहानियों में देखने को मिलता है कि किस प्रकार सवर्ण समाज में नयी आर्थिक चेतना देखने को मिल रही है। जिसमें जाति के प्रश्न अर्थ के आगे नगण्य नज़र आते हैं। यह एक उचित कदम है क्योंकि रोटी के साथ बेटी के व्यवहार से ही जाति का विनाश संभव है यह डॉ. आम्बेडकर भी कह चुके हैं अंतरजातीय वैवाहिक संबंधों से दो संस्कृतियों का मेल होगा जिससे आने वाली पीढ़ी भी दलित व सवर्ण समाज की खाई को दूर कर सकेगी। परन्तु यह कथा इस संभावना को निरस्त करती है इसका प्रमुख कारण देवधारी का अपने मूल्यों को छोड़ दिखावे की आडंबर युक्त जिंदगी जीना है जिसमें पैसे की चकाचौंध व समाज में प्रतिष्ठित पद पर पहुँचकर वह अपनी मूल जड़ों को भूल गया है, वह स्वयं की जाति से ही हीन भावना रखता है तभी वह उसे छुपाकर रखने के लिए उच्चवर्णीय समाज के दिखावी तौर तरीकों को अपनाता है। अगर वह अपने आम्बेडकरवादी मूल्यों, जो उसे अपने माता-पिता से संस्कार स्वरूप मिले थे, अपनाए रहता तो वह इन धार्मिक अंधविश्वासों में नहीं पढ़ता तथा अपने पद व धन का प्रयोग अपने समाज को आगे बढ़ाने में करता। गरीब दलितों को अपने पुत्र के जन्मदिन की

जूठन देने का प्रकरण लेखक ने इसलिए उठाया है कि यह देखकर देवधारी के भीतर सोई हुई चेतना पुन: जागृत हो।

देवधारी ने भले ही आरक्षण से पदोन्नति पाई हो लेकिन वह कभी इसे स्वीकार नहीं करना चाहता वह अपने पुत्र को यह समझा ही नहीं पाया कि जिस आरक्षण की वजह से आज वह समृद्ध हुए हैं उसके पीछे आर्थिक कारण नहीं बल्कि सामाजिक असमानता है परन्तु देवधारी के पुत्र दीपक ने जातीय भेद का वह रूप कभी महसूस ही नहीं किया उसके भीतर आरक्षण की सुविधा लेकर भी स्वीकारने का सामर्थ्य व सामाजिक स्वीकार्यता नहीं है। दीपक कहता है- "समृद्ध दलितों को आरक्षण की सुविधा नहीं लेनी चाहिए।" लेखक का यह कथन कहना इस ओर इशारा करता है कि ललिता का नियोजित ढंग से देवधारी से विवाह कर अपने भविष्य को सुरक्षित करने के पीछे आरक्षण की प्रमुख कारण था जो देवधारी के पुत्र होने के नाते दीपक को भी मिला। आत्मालोचन की यह कथा दलित समाज के आर्थिक संपन्न होने पर अपनी जड़ों से अलग होने की है जो कि सही नहीं है क्योंकि इससे सामाजिक रूप से वह अपने समाज को कुछ नहीं दे सकेगा। ऐसे ही प्रश्नों को लेकर सूरजपाल चौहान की कहानी 'नया ब्राह्मण' याद आती है जिसकी पृष्ठभूमि समान है परन्तु प्रस्तुतिकरण एकदम अलग है। 'नया ब्राह्मण' में एम.आर बाली आरक्षण से प्राप्त सुविधाओं को प्राप्त कर डॉ. अंबेडकर के द्वारा बनाई नीतियों को भूल चुका है और उनके महत्त्व को स्वीकार करने से भी मना कर देता है। कांच कहानी में बंसत बाबू का चरित्र पूर्णत: अपने समाज व जाति के प्रति समर्पित है। वह अपने पुत्र के विवाह के संबंध में सोचते हुए भी दलित समाज के प्रति भले की भावना रखते हैं। बंसत बाबू दलित समाज के पढ़े-लिखे धनाड्य वर्ग के युवा लड़कों का विवाह अपने ही समाज व जाति के सुविधाओं से वंचित लड़की के साथ करने के पक्ष में है। बसंत बाबू की अर्थनीति के अनुसार एक दलित संपन्न परिवार के साथ एक गरीब विपन्न परिवार की आर्थिक स्थिति सुधरेगी वह अपने पुत्र सुयश से कहता है- "जिस घर में तुम शादी करोगे, निश्चत ही वह बड़ा घर होगा, जहाँ सुख-सुविधाओं की भरमार होगी, सवर्ण हैं तो समाज के नीति-निर्देशक भी होंगे यानी कि एक बड़े घर की बेटी बड़े घर में जाएगी क्योंकि अब तुम भी बड़े हो गए हो, लेकिन हमारे समाज में तुम दुर्लभ हो। अपनी ही वर्ग-बिरादरी की लड़की से शादी करोगे तो जो लड़की ढेरों बुनियादी सुविधाओं से वंचित रही है वह उसका उपभोग करेगी, अपना व्यक्तित्व निखारेगी।" बसंत बाबू की यह समझ वाकई दलित समाज की अभावों में रह रहें परिवार की सहायता होगी। परन्तु कथा में सुयश को किसी सवर्ण लड़की से प्रेम है वह उससे विवाह करना चाहता है ऐसे में यह जानते हुए बसंत बाबू का सुयश को यह सलाह देना अनुचित जान पड़ता है। इससे अपनी जाति व समाज के प्रति बसंत बाबू का अतिझुकाव तो दिखाता है परन्तु विवाह सामाजिक सुधारों की नींव रखने का एक जरिया नहीं हो सकते इसलिए आर्थिक दृष्टि से बसंत बाबू का यह विचार जितना महत्त्वपूर्ण व उचित ठहरता है जहाँ अमीरी और गरीबी का प्रश्न हो। प्रेम वर्ण, जाति, धर्म देखकर नहीं किया जाता इसलिए बसंत बाबू यहाँ पर सुयश पर अपनी वैचारिकी थोपते हुए भी नज़र आते हैं और एक सवर्ण लड़की से विवाह को अस्वीकारते हैं। इस विवाह को अस्वीकारने के पीछे बसंत बाबू के भीतर कई पूर्वाग्रह हैं जो उन्हें सवर्ण जातियों पर विश्वास करने से रोकते हैं। लेकिन दलित आलोचक डॉ. तुलसीराम ने भी यही संदेह व्यक्त किया है। वह अपनी आत्मकथा 'मणिकर्णिका' में सवर्ण लड़कियों द्वारा दलित लड़कों से विवाह करने को आधुनिक व सामाजिक परिवर्तन के लिए महत्त्वपूर्ण कदम बताया है। वे लिखते हैं-

"यदि जाति-पाति तोड़नी है, तो सवर्ण लड़कियों को दलित लड़कों से शादी करनी चाहिए। यदि सांसद या विधायक अपनी लड़कियों की शादी दलितों से करें तो वे भारी बहुमत से चुनाव जीत सकते हैं।" डॉ. तुलसीराम ने भी यह संकेत दे ही दिया कि लाभ प्राप्तिवश ही सही सवर्ण समाज दलितों से वैवाहिक संबंध रखने की पहल करेंगे इसलिए कहा जा सकता है कि विपिन बिहारी का यह डर निरर्थक नहीं है। कथा में एक जगह बसंत बाबू आरक्षण से मिली सुविधाओं के प्रति कृतघ्न होते अपने पुत्र को समझाते हुए जाति के महत्त्व व उसकी सार्थकता को सुनिश्चित करते हुए तर्क देते हैं। कांच कहानी बड़ी ही उलझी हुई है क्योंकि आप पूर्णत: एक पक्ष की तरफ हो ही नहीं सकते जैसे ही आप बसंत बाबू का पक्ष लेने लगेंगे आपको तोड़ी ही देर में वहीं गलत भी लगने लगेंगे। सुयश के साथ भी यही उलझन होने लगती है। आप यह तय नहीं कर पाएंगे कि लेखक ने जो प्रश्न उठाया है, जाति को छोड़ने का तो क्या पाठक को किसके समर्थन में या असमर्थन में जाना चाहिए। यह कथा पाठक के मन-मस्तिष्क को एक समाधान देते हुए फिर उलझा देती है। वाकई यह विपिन बिहारी की बेहतरीन कहानियों में से एक है। बसंत बाबू जाति को त्यागने के अपने बेटे के निर्णय पर प्रश्न उठाते हुए उसे आरक्षण से मिले पद व उसकी प्रतिभा पर संदेह करते हुए भी दिखते हैं।

निष्कर्ष- विपिन बिहारी की इन कहानियों में सामाजिक और आर्थिक चेतना के स्वर दिखते हैं। दायरा कहानी में सामाजिक चेतना के स्वर प्रमुखता से उठाए गए हैं जिसके केन्द्र में ईश्वर व धार्मिक आडंबरों पर लेखक ने कटाक्ष किया है तथा दलित संस्कृति को हिंदू धार्मिक रीतियों से बेहतर व चेतनशील बताया है। वह लगातार दलित व सवर्णों के रहन-सहन व मान्यताओं की तुलना करते हैं जिसमें दलित संस्कृति अधिक तार्किक लगी जबकि सवर्ण हिंदू समाज में हवन, पूजा-पाठ, हाथों में अँगुठिया पहनना इन सब को दिखावे की श्रेणी में रखा है। दलित देवधारी के माध्यम से लेखक ने ईश्वर की सत्ता पर प्रश्न खड़े किये हैं जो विचारणीय हैं। कांच और दायरा दोनों कहानियों का कथानक अलग है परन्तु एक प्रश्न लेखक दोनों में उठाता है। लेखक की दायरा कहानी सवर्णों के दलितों के साथ विवाह करने के पीछे गहरे षड़यंत्र की ओर भी ध्यान खींचती है। जिसके अंतर्गत आरक्षण का लाभ प्राप्त करने के लिए सवर्णों का दलितों के साथ रोटी-बेटी का संबंध रखना दिखाया गया है। कांच कहानी में दलित भले ही सवर्ण जाति के साथ विवाह कर अपनी जाति से अलग होना चाह रहा है परन्तु वह आरक्षण का लाभ भी लेना चाह रहा है। इन दोनों दृष्टियों से लेखक देवधारी और सुयश जैसे दलित पात्रों को अपनी कहानी में जगह देकर दलित समाज से ही प्रश्न पूछ रहा है। दायरा और कांच कहानी में आर्थिक चेतना के समान रूप देखने को मिलते हैं। कांच कहानी एक प्रश्न उठती है कि अगर यह स्वीकार कर लिया जाए कि बिना आरक्षण के दलित पद प्राप्त नहीं कर सकते तो यह एक अनुचित कथन होगा जिससे कई लोग असहमत हो सकते हैं परन्तु दूसरे प्रश्न के उत्तर में अगर यह कहा जाए कि आरक्षण ने भारतीय संविधान में जगह बनाकर दलितों को अपनी प्रतिभा सामने रखने का मंच दिया है तो आरक्षण को बैसाखियों का पर्याय मान लिया जाएगा। इसके लिए जरूरी है आरक्षण के सही अर्थों को जानना। कथा के अंत में भी लेखक इसमें अपनी कोई राय नहीं रखते वह उन सवालों को लेकर खड़े हुए हैं जो आज का युवा तथा दलित आंदोलनों के दौर से परिपक्व हुए आदमी के मनमस्तिष्क में जरूरी उपजे होंगे। दोनो ही कथाओं में सामाजिक और आर्थिक चेतना देखने को मिली जो एक दूसरे से जुड़ी हुई है बिना सामाजिक परिवर्तन के आर्थिक परिवर्तनों से समाज में समानता नहीं आ सकती। दलित विरोधी मानसिकता को समाप्त करने के लिए

आर्थिक पक्ष के साथ दलितों की सामाजिक स्तर पर स्वीकार्यता आवश्यक है तभी दलित समाज सवर्णों पर पूर्ण रूप से विश्वास कर पायेंगा।

संदर्भ-

1) विपिन बिहारी, प्रथम संस्करण 2015,दो ध्रुवीय (कहानी संग्रह), सम्यक प्रकाशन, पैपरबैक्स, पृ.सं 6 भूमिका से
2) विपिन बिहारी,फरवरी 2018,दायरा, युद्धरत आम आदमी पत्रिका, पृ.सं2018), पृ.सं 19
3) वही पृ.सं.22,
4) वही (पृ.सं 23,
5) विपिन बिहारी, प्रथम संस्करण 2016, कांच(कहानी) दलित चेतना की कहानियां, संपादक- डॉ रामचंद्र, डॉ. प्रवीण कुमार, ईशा ज्ञानदीप,, पृ.सं 339
6) वही (पृ.सं 340)
7) वही (पृ.सं 347)
8) विपिन बिहारी, फरवरी 2019 दायरा(कहानी),(युदरत आम आदमी) , (पृ.सं 20)
9) वही (पृ.सं 20)
10) संपादक- डॉ रामचंद्र, डॉ. प्रवीण कुमार, प्रथम संस्करण 2016, दलित चेतना की कहानियां,(कांच कहानी-विपिन बिहारी) ईशा ज्ञानदीप, पृ.सं 339,
11) वही (पृ.सं 346,
12) वही (पृ.सं 346,
13) अरुंधति रॉय, संस्करण 2019, 'एक था डॉक्टर एक था संत',राजकमल पेपरबैक्स,)पृ.सं 20
14) विपिन बिहारी, फरवरी 2019 ,दायरा-कहानी,युदरत आम आदमी, पृ.सं 23,
15) संपादक- डॉ रामचंद्र, डॉ. प्रवीण कुमार, प्रथम संस्करण 2016, दलित चेतना की कहानियां,(कांच कहानी-विपिन बिहारी) ईशा ज्ञानदीप,(पृ.सं 347
16) विपिन बिहारी, फरवरी 2019 दायरा(कहानी),युदरत आम आदमी ,पृ.सं 23, दायरा)
17 संपादक- डॉ रामचंद्र, डॉ. प्रवीण कुमार, प्रथम संस्करण 2016, दलित चेतना की कहानियां,(कांच कहानी-विपिन बिहारी) ईशा ज्ञानदीप, पृ.सं 346,
18) डॉ. तुलसीराम, संस्करण 2014,मणिकर्णिका, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,आवृति 2015, पृ.सं 70